**ओ३म्**

**‘आत्मा को भुला देने से विश्व में अशान्ति आदि समस्त समस्यायें’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्यों द्वारा अपनी आत्मा व शरीर में भेद न करने व आत्मा व शरीर को एक मान लेने के कारण ही विश्व में अशान्ति व नाना प्रकार की समस्यायें हैं। इन सबका हल यही है कि संसार के सभी मनुष्य आत्मा के यथार्थ स्वरूप को जानें। इसके लिए यह आवश्यक है कि व्यवस्था से जुड़े शीर्षस्थ व्यक्ति सर्वसम्मति से शिक्षा में आत्मा विषयक यथार्थ ज्ञान के अध्ययन व अध्यापन की व्यवस्था करें। जो व्यक्ति आत्मा का कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेगा तो वह परमात्मा के यथार्थ स्वरूप को जाने बिना चैन से नहीं बैठ सकता। वेद, उपनिषद व योग-सांख्य-वेदान्त दर्शन से ईश्वर विषयक यथार्थ ज्ञान भी इसके अध्येताओं को अवश्य होगा जिससे वह वैराग्य को प्राप्त होगें। वैराग्य ज्ञान की पराकाष्ठा को कहते हैं। बच्चा बड़ा होकर खिलौनो से खेलना इसलिए बन्द कर देता है कि उसे इनकी वास्तविकता का ज्ञान हो जाता है। जिस मनुष्य को यह पता लग जाये कि उसे कुछ दिन बाद मरना है तो उसे नींद नहीं आती, स्वादिष्ट भोजन भी अच्छा नहीं लगता और धन ऐश्वर्य होते हुए भी जीवन नीरस, फीका व स्वादरहित हो जाता है। इस स्थिति के बनने पर अध्यात्मिक ज्ञान व ईश्वरोपासना आदि साधनों से जीवन को सुखी, आनन्दयुक्त व सरस बनाया जा सकता है। आज के व्यक्तियों को देखकर लगता है कि वह सभी आंखें बन्द कर मार्ग पर चल रहे हैं और, देर व सबेर, सभी एक बड़ी दुर्घटना का शिकार होंगे जिससे यदि कोई बचा सकता है तो वह वेदों व उपनिषदों का ज्ञान ही है। इसके लिए महर्षि दयानन्द का लघुग्रन्थ आर्याभिविनय व सत्यार्थप्रकाश आदि के प्रथम, सप्तम, अष्टम, नवम व दशम समुल्लास भी उपयोगी हो सकते हैं। वैदिक विद्वानों ने वेदमन्त्रों की आध्यात्मिक व्याख्याओं के संग्रह प्रकाशित किये हुए हैं, वह भी मनुष्य का मार्गदर्शन कर सकते हैं।

आत्मा का ज्ञान क्यों आवश्यक है? इस प्रश्न का उत्तर है कि आत्मा का गहरा सम्बन्ध मुझसे व सभी प्राणियों का अपने आप से है। कुछ भी जानने से पहले मुझे स्वयं को जानना अनिवार्य है अन्यथा हम भोग पदार्थों को अर्जित कर उनके भोग का विवेकपूर्ण निर्णय नहीं कर पायेंगे। यदि किसी शिक्षित व्यक्ति से पूछा जाये कि वह अपने आप व स्वयं को जानता है तो वह कुछ न कुछ उत्तर अवश्य देगा। वह उत्तर ठीक हो सकता है परन्तु वह अपूर्ण ही होगा। आत्मा व मैं एक हैं। मेरे जीवन में मैं ही आत्मा और आत्मा ही मैं हूं। इस आत्मा का इतिहास व जन्मादि कब, कैसे, कहां व किससे हुआ, यह प्रश्न जानने पर जो स्थिति हमें अवगत होती है, उससे बड़े बड़े ज्ञानी भी अनभिज्ञ व अपरिचित हैं। हमारा आत्मा एक चेतन पदार्थ है। चेतन का अर्थ है कि इसमें सुख व दुःख की संवेदनायें, जिज्ञासायें व ज्ञान तथा क्रिया करने की सामथ्र्य होती है। इसके विपरीत जड़ पदार्थ होते हैं जिनमें किसी प्रकार की संवेदनायें व सुख व दुःख की अनुभूति, ज्ञान व स्वयं उद्देश्य प्रधान क्रिया करने की सामर्थ्य नहीं होती। सभी भौतिक पदार्थ जड़ पदार्थों की श्रेणी में आते हैं। हमारा व सभी प्राणियों का शरीर भौतिक पदार्थों से मिलकर बना है। हम अन्न के रूप में जिन पदार्थों का सेवन करते हैं उसी से हमारा शरीर बना व बनता है। इस शरीर का निर्माण स्वतः नहीं होता अपितु ईश्वर के विधान व उसके द्वारा ही होता है। इस शरीर का एक-एक अंग कितना महत्वपूर्ण है, इसका अनुमान तब पता चलता है कि जब कोई अंग विकारयुक्त हो जाता है या कार्य करना बन्द कर देता है। वर्तमान में विकसित चिकित्सा विज्ञान इन विकारों का उपचार करता है, कुछ स्वस्थ हो जाते हैं और कुछ परलोक सिधार जाते हैं। मनुष्य, वैज्ञानिक व चिकित्सक शरीर व उसके किसी भाग को बनाते नहीं, उस ईश्वर के नियमों द्वारा बने शरीर का अध्ययन कर केवल रोग व विकार के कारणों को हटाने का काम करते हैं जिसमें उन्हें आंशिक सफलता व विफलतायें दोनों ही मिलती हैं। जीवात्मा शरीर से पृथक एक चेतन तत्व है जबकि हमारा शरीर जड़ पदार्थों से मिलकर बना व बनाया गया है। इस शरीर को तो विज्ञान ने काफी हद तक जान लिया है परन्तु आत्मा का ज्ञान उपलब्ध होने पर भी सभी लोग जिनमें शिक्षित, ज्ञानी एवं वैज्ञानिक भी सम्मिलित हैं, अपने संस्कारों, स्वभाव व सांसारिक पदार्थों से आकर्षित होकर भ्रमित रहते हैं जिसका परिणाम सुख व दुःख व यदा-कदा कम आयु में व अधिकांश की 60 से 80 वर्ष की आयु के बीच मृत्यु का होना है।

जीवात्मा शरीर से भिन्न चेतन पदार्थ है, यह जानने के बाद जीवात्मा की उत्पत्ति से जुड़े प्रश्नों पर विचार करना भी आवश्यक है। प्रत्येक कार्य का एक कारण होता है परन्तु मूल कारण का कारण नहीं होता। जीवात्मा प्रकृति में उपलब्ध किसी भौतिक पदार्थ के द्वारा निर्मित नहीं है। यह अनादि व अनुत्पन्न है। हम देखते हैं कि भौतिक पदार्थों का स्वरूप परिवर्तन होता रहता है। विज्ञान भी मानता है कि पूर्ण नाश व समाप्ती किसी पदार्थ की कभी नहीं होती। दर्शन के आधार पर विचार करें तो भाव से भाव उत्पन्न होता है, अभाव से भाव उत्पन्न नहीं हो सकता। इसी प्रकार भाव का अभाव भी नहीं हो सकता। अतः आत्मा यदि है, जो कि प्रत्यक्ष अनुभव से जानी जाती है, तो यह आत्मा भाव पदार्थ है, इसका अभाव व पूर्ण नाश कदापि नहीं हो सकता। इस लिए आत्मा को अविनाशी स्वीकार किया जाता है। अमरता अर्थात् न मरना भी आत्मा का गुण है। शरीर की मृत्यु होती है, आत्मा की नहीं। आत्मा तो ईश्वर के नियमों से शरीर से निकल कर अपने कर्मानुसार अन्य किसी योनि में जन्म ग्रहण करने के लिए चला जाता है। इसी नियम का पालन करते हुए हम अपने पूर्वजन्म के स्थान से अपने वर्तमान के पिता व माता के शरीरों से होते हुए जन्में हैं। जन्म लेने वाले की मृत्यु और मृतक का जन्म होना भी एक सत्य शास्त्रीय सिद्धान्त होने के साथ तर्क व युक्तियों से भी सिद्ध है। अतः हमारी कालान्तर में मृत्यु अवश्य होनी है। यह शाश्वत् सत्य है परन्तु सभी मनुष्य लोग सारा जीवन इस सत्य से अनजान बने रहते हैं। यदि यह सत्य है तो क्यों न हम अपने जन्म और मृत्यु के सत्य को अधिक न सही, प्रातः व सायं ही स्मरण कर मृत्यु के भय पर विजय पाने की चेष्टा व अभ्यास करें। यदि हम मृत्यु को स्मरण रखेंगे और इससे होने वाले दुःख पर विजय पाने के लिए आत्मा के सत्यस्वरूप को जानकर उससे इस संसार के रचयिता को जानने सहित उसकी पूर्ण तर्क व युक्तिपूर्वक स्तुति, प्रार्थना व उपासना करेंगे साथ हि सदाचारयुक्त जीवन व्यतीत करेंगे तो हम निश्चय ही मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।

मृत्यु के स्वरूप को जानकर व उसके दुःख पर उस ज्ञान से मोह व अहंकारयुक्त जीवन का त्याग कर हम अवश्य ही अपने बुरे कर्मों जिनसे समाज व देश के निर्दोष लोगों को हमारे स्वार्थों के कारण दुःख होता है, उनसे बचने का अवश्य प्रयत्न करेंगे क्योंकि हमें यह ज्ञान हो जायेगा कि संसार का सर्वव्यापक रचयिता, पालक, धारणकर्ता व सभी जीवात्मा के प्रत्येक शुभ व अशुभ कर्मों का नियन्ता व न्यायाधीश हमारे किसी कर्म को क्षमा नहीं करेगा और उसका उचित दण्ड जन्म व जन्मान्तरों में हमें अवश्य देगा। आत्मा पर विचार करते रहने व इस विषयक सत्साहित्य पढ़ने से आत्मा के अन्य गुणों व स्वरूप जिसमें इसका सूक्ष्म होना, एकदेशी होना, कर्म करने में स्वतन्त्र और उनके फल भोगने में ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होना, पूर्वजन्मों के कर्मानुसार हमें इस मनुष्य योनि व सामाजिक परिवेश, माता, पिता आदि का मिलना व भविष्य में इस जन्म के कर्मों के आधार पर भावी मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि किसी योनि में जन्म मिलना, अज्ञान से दुःखों को प्राप्त होना व सत्य ज्ञान से दुःखों के स्वरूप को जानकर उनसे मुक्त व सुखी होना, आत्मा आकाररहित है, अल्पशक्ति वाला, अल्पज्ञ है, आदि जीवात्मा के स्वरूप व इसके विविध गुणों का ज्ञान होता है। जीवात्म अनादि व अनुत्पन्न होने से यह कभी बना व जन्मा नहीं है। इसी कारण इसकी मृत्यु, नाश व अभाव भी कभी नहीं होगा। यह जीवात्मा सदा-सर्वदा अपने अस्तित्व को विद्यमान रखते हुए जन्म-मरण के चक्र में फंसा रहेगा, इसका ज्ञान स्वाध्याय, चिन्तन-मनन व सच्चे गुरू के उपदेश से होता है।

जीवात्मा का अच्छा व बुरा पूर्वजन्म समाप्त हो चुका है, उसके बारे में कुछ करना करणीय नहीं है। वर्तमान जीवन सुखी, समृद्ध व यशस्वी हो तथा परजन्म भी इस जन्म से अधिक उन्नत हो, यह सभी जीवात्माओं वा मनुष्यों का मुख्य उद्देश्य होना चाहिये। इसके लिए प्रथम जीवात्मा व परमात्मा के सत्यस्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। यह ज्ञान वेद, उपनिषद, योग, सांख्य व वेदान्त दर्शन सहित सत्यार्थप्रकश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थों में सुलभ है। श्री कर्मनारायण कपूर का ग्रन्थ **‘जीवात्मा का स्वरूप’** और पं. राजवीरशास्त्री सम्पादित दयानन्दसन्देश पत्रिका का तीन खण्डीय **‘जीवात्म-ज्योति-विशेषाक’** का अध्ययन कर उनमें निहित आत्मा विषयक ज्ञान को आत्मसात किया जाना समीचीन है। इस ज्ञान के अनुसार जहां मनुष्यों को पुरूषार्थमय जीवन व्यतीत करते हुए अशुभ कर्मों का त्याग कर समस्त शुभ कर्म ही करने हैं वहीं वैदिक विधि से ईश्वर की उपासना, यज्ञ-अग्निहोत्र अनुष्ठान, माता-पिता-आचार्य-विद्वानों की सेवा-सत्कार सहित परोपकार व यथाशक्ति आर्ष-गुरूकुल-प्रणाली व वेदविद्या के प्रचार व प्रसार में सहयोग भी करना है। इन शुभकर्मों का लाभ हमें इस जीवन व परजन्म में मिलता है। आत्मा के सत्यस्वरूप को जाने बिना यह सभी कार्य नहीं किये जा सकते। इन कर्मों को करने से हमारा वर्तमान व परजन्म दोनों ही सुधरेंगे और हम इससे मुमुक्षत्व को प्राप्त होकर और अधिक त्यागपूर्वक जीवन व्यतीत कर मुक्ति के अधिकारी भी बन सकते हैं।

जीवात्मा व ईश्वर के सत्य स्वरूप को जानकर मनुष्य अशुभ कर्मों का त्याग कर देता है। स्वार्थ से ऊपर उठकर देश व समाज के हित की कामना से शुभ कर्मों को करता है। वह असत्य व अशुभ कर्मों के परिणामों को जानकर उनका सर्वधा त्याग व निषेध कर देता है। वेदाध्ययन करने से उसे अपने कर्तव्यों का बोध बना रहता है जिससे उसकी अशुभ प्रवृत्तियां नियंत्रण में रहती है। ऐसा करके वह मृत्यु को भी यथार्थरूप में जानकर उसके भय से मुक्त हो जाता है और देश व समाज के सभी लोग उससे लाभान्वित होते हैं। मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम, योगेश्वर श्री कृष्ण, महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वामी श्रद्धानंद, स्वामी दर्शनानन्द, पं. लेखराम, पं. गुरूदत्त विद्यार्थी आदि का जीवन इसी प्रकार का जीवन था। यह श्रेय का मार्ग है। सरकार का कर्तव्य एवं दायित्व है कि वह जीवात्मा व ईश्वर सहित वेदों का सत्य ज्ञान सभी देशवासियों को कराये और उसके विरोध में उठने वाले अज्ञानता व स्वार्थान्धता के स्वरों की चिन्ता न करे। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो शायद यह देश सुरक्षित नहीं रह सकेगा।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**